

دسمبر ۲۰۰۶ء

ماہنامہ شعاعِ کمال

قال اللہ تبارک و تعالیٰ
قد جاءکم من اللہ نور و کتاب مبین
یسلک اللہ من یشاء منہ ما یشاء و لا یجوز علیکم ان تلوونہ منہ و لا تأخذوا منہ عیناً و لا تأخذوا منہ عیناً و لا تأخذوا منہ عیناً



مؤسسہ نور ہدایت حسینیہ غفران مآب لکھنؤ-۳

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526
Postal Regd. No. SSP/LW/NP-75/2005-07

Monthly

SHUA-E-AMAL

Lucknow

शुआ-ए-अमल

December
2006

हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका
लखनऊ



NOOR-E-HIDAYAT FOUNDATION

Imambara Ghufuran Maab, Chowk
LUCKNOW-3 (U.P.) INDIA
Phone : 2252230

वर्ष—3

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526
Postal Regd No-SSP/LW/NP-75/2005-07

अंक 6

माह दिसम्बर — 2006 लखनऊ
नूर—ए—हिदायत फाउण्डेशन की
हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका

शुआ-ए-अमल

“लखनऊ”

संरक्षक

मौलाना सै. कल्बे जवाद नकवी साहिब

सम्पादक

सै. मुस्तफा हुसैन नकवी 'असीफ' जायसी

उप—सम्पादक

हैदर अली

सलाहकारी परिषद

प्रोफेसर सै० अली मुहम्मद नकवी, प्रोफेसर सै० हुसैन कमालुद्दीन अकबर,
मु० र० आबिद, सैय्यद समीउल हसन वसीम, तज़हीब नगरौरी

वार्षिक — 200 रु

मिलने का पता

कीमत — 20 रु

नूर—ए—हिदायत फाउण्डेशन

इमामबाड़ा हज़रत गुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड
चौक लखनऊ — 3 (उ.प्र.) भारत फोन न० 0522—2252230

सै. कल्बे जवाद नकवी प्रिन्टर, पब्लिशर और प्रोपराइटर ने मासिक शुआ-ए-अमल (उर्दू, हिन्दी) निज़ामी आफ़सेट प्रेस विक्टोरिया स्ट्रीट लखनऊ से छपवाकर आफ़िस
नूर-ए-हिदायत फाउण्डेशन इमामबाड़ा गुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड लखनऊ-3 से प्रकाशित किया। सम्पादक : सै० मुस्तफा हुसैन नकवी 'असीफ जायसी'।

फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

न०	मज़मून	लेखक	पेज न०
1-	शादी का निज़ाम (सिस्टम)		
	आयतुल्लाहिल उज़मा सैय्यदुल उलमा सैय्यद अली नकी ताबा सराह		3
2-	मुबाहला		
	इमादुल उलमा अल्लामा सै मुहम्मद रज़ी साहब किब्ला		10
3-	एक सबक़ इस्लाम से		
	सफ़वतुल उलमा मौलाना सैय्यद कल्बे आबिद साहब किब्ला ताबा सराह		12
4-	'ग़दीर' मुबारक		
	मु० र० आबिद		14
5-	इतिहास और इस्लाम में औरत की हैसियत		
	हुज्जतुल इस्लाम हुसैन अन्सारियान		16
6-	मुख्य समाचार		
	इदारा		18

अक़्वाले इमाम मुहम्मद बाकिर अलैहिस्सलाम

- ☐ नमाज़ में खड़े होकर कुआन पढ़ने वाले को अल्लाह हर हर्फ़ के बदले सौ नेकियाँ अता करता है। बैठकर पढ़ने वाले को पचास, नमाज़ के अलावा कुआन पढ़ने वाले को हर हर्फ़ के बदले दस नेकियाँ देता है।
- ☐ अक़लमन्द वह है जिसका किरदार उसकी गुफ़्तार की तस्दीक़ करे और लोगों से नेकी का बर्ताव करे।

शीआ पर्सनल लॉ बोर्ड के माडल निकाहनामे का असल माँख़ज़ (लेकिन अफसोस कि फिर भी समझने और समझाने में हज़राते केराम से ग़लती हो गई)

मारो घुटना फूटे आँख

क़रीब 74 साल पहले सरकार सय्यिदुल उलमा (रह0) ने मदरसतुल वाएज़ीन के बयानों में इस मसले की तरफ उलमा व मोमिनो को ध्यान दिलाया था कि औरतों की मुश्किलों को ध्यान में रखते हुए यह ज़रूरी है कि निकाह के वक़्त बीवी को तलाक़ की वकालत का हक़ दे दिया जाए फिर काफी अरसे बाद अल्लामा ने 13 दिसम्बर 1957 ई0 को मुजाहिदे मिल्लत से0 इब्ने हुसैन नक़वी के बेटे का निकाह, सीगों में “बिश्शरतिल मालूम” और तौकील (वकील होना) के सीगों के इज़ाफ़े के साथ पढ़ ही दिया। निकाह से पहले तक़रीर में सय्यिदुल उलमा ने फरमाया:

तलाक़ की वकालत की शर्तें

“अगर शौहर एक साल तक बिना किसी वजह के खाना-कपड़ा न दे, चाहे उस शहर में रहकर चाहे यहाँ से किसी दूसरी जगह चले जाने पर, बीवी के साथ बदसुलूकी जैसे मार-पीट या ऐसी सख़्त बातें, जो गाली गलौज में दाख़िल हो, और जो ग़ैर शरीफ़ाना सूरत रखती है तो बीवी को हक़ होगा कि वह शौहर की तरफ से वकील की हैसियत से खुद या किसी को वकील बनाकर और दो आदिल गवाहों की मौजूदगी में तलाक़ का सीगा जारी करके तलाक़ हासिल कर ले।”

इस तरह की शर्तें पहले से दोनों तरफ से तै हो जाना चाहिँ यह शर्तें दोनों तरफ की मर्ज़ी से पहले से तै हो जाना चाहिँ ताकि

अक़द के वक़्त इन शर्तों का हवाला ‘शर्तिल मालूम’ की लफज़ से दे दिया जाए।

तौकील का सेगा

बेहतर यह है कि अक़द के बाद एक शरख़्स निकाह करने वाले से तौकील के सीगे को जारी करने की इजाज़त ले ले और दूसरा शरख़्स औरत की तरफ से तौकील के क़बूल करने का वकील हो जाए, फिर

मर्द का वकील कहे: वक़लतु फुलानतन फित्तलाकि अन्नी बिनफ़िसहा औ बिवकीलिहा बिश्शर्तिल मालूम।”

औरत का वकील कहे: क़बिलुत्तौकी-ल लिमुवक़िलती बिश्शरतिल मालूम।

“कहीं पर नज़र है कहीं पर निशाना”

वाले हज़रात ने जब “माडल निकाहनामा” पेश किया तो माख़ज़ (स्रोत) से थोड़ा अगल-थलग रहने के चक्कर में एक भारी ग़लती कर बैठे यानि यह कहने के बजाए कि निकाह के वक़्त बीवी तलाक़ की वकालत का हक़ हासिल करके फाएदा उठाए। बल्कि यह फरमा दिया कि औरत, ‘खुलअ’ से हट के मर्द को तलाक़ दे सकती है और हद है कि आयतुल्लाह सीस्तानी पर भी इल्ज़ाम लगा दिया कि उन्होंने भी इस बात की हिमायत कर दी है।

**ब ई अक़लो दानिश बबायद गिरीस्त
(इस अक़लमन्दी पर रोना चाहिए)**

असीफ़ जाएसी

20 नवम्बर 2006ई0—28 शव्वाल 1427 हि0

तआरुफ़

यह रिसाला सरकार सय्यदुलउलमा मददाज़िल्लहू के उस बयान का खुलासा है जो ममदूह ने मस्जिद वाके बाग़ जनाब जन्नत मआब ताबा सराह में 20 जमादिल अव्वल 1377 हि० मुताबिक 13 दिसम्बर 1957 ई० जुमे के दिन उस मौके पर इरशाद फरमाया कि जब मेरे बेटे सै० काज़िम हुसैन नक़वी सल्लमहू का अक़द जनाब सै० मुस्तफा हसन साहब रिज़वी एडिटर सरफराज़ की बेटी सल्लमहा के साथ हो रहा था।

चूँकि हिन्दुस्तान में हर तरह से अपनी तरह का शायद यह पहला अक़द था जिसमें शौहर की तरफ से बीवी को तलाक़ की वकालत का हक़ भी दे दिया गया है इसलिए अख़बारों में इस तक़रीब के हालात शाए होने के बाद से मुबारकबाद के ख़तों के साथ अक़द के जुमलों वग़ैरा की तफ़सील माँगी जा रही हैं। इसलिए इस नसीहत के साथ उन मालूमात को भी शामिल कर दिया गया है।

काश! मिल्लत के लोग इस मिसाल से पूरा-पूरा फाएदा उठाएँ।

अददाओी इलल ख़ैर

**सै० इब्ने हुसैन नक़वी अफा अन्हु
आनरेरी सिक्रेटरी इमाममिया मिशन
लखनऊ**

जमादिस्सानी 1377 हि०

जनवरी 1958 ई०

शादी का निज़ाम (सिस्टम)

**आयतुल्लाहिल उज़मा सरकार सैय्यदुल
उलमा सैय्यद अली नकी ताबा सराह**

यह पैदा करने वाले की नज़र में शादी के निज़ाम की अहमियत है कि जिस तरह आसमान की पैदाईश को वह अपनी आयत यानी कुदरत की निशानी बताता है, जिस तरह आफ़ताब व माहताब और पूरे फलकी निज़ाम को अपनी आयत क़रार देता है, जिस तरह घटाओं के आने जाने और उनकी बारिशों को वह अपने आयात में हिसाब करता है और खुद इंसान की ख़िलक़त को अपनी सबसे बड़ी आयत के तौर पर बयान फरमाता है जिसके लिए कुर्आने मजीद में बहुत सी आयतें आई हैं। इसी तरह इस कुर्आनी आयत में वह शादी के निज़ाम को भी अपनी कुदरत की एक ख़ास आयत की हैसियत से पेश फरमा रहा है। इरशाद होता है कि इसकी कुदरत की निशानियों में से एक यह है कि उसने तुम्हारे लिए खुद तुम ही में से जोड़े पैदा किये ताकि तुम सुकून व भरोसे के साथ उनकी तरफ़ झुको। और तुम्हारे बीच मेल व मुहब्बत पैदा कर दी। "पैदा किये" की लफ़्ज़ से यह भी ज़ाहिर है कि शादीशुदा ज़िन्दगी का छोड़ना पैदाईश के मक़सद के ख़िलाफ़ है जो रुहबानियत (दुनिया छोड़ने और शादी न करने) के ख़याल पर गहरी चोट है। और इसमें अच्छे ढंग से उस मशहूर अवामी कहावत की असल भी छुपी हुई मालूम होती है। अवाम कहते हैं कि "बर" आसमान से उतरता है। मिन अनफुसिकुम (तुम ही में से) इसकी सराहत कुर्आने मजीद की दूसरी आयतों में भी है। यह उस बहस का हल है जो मुद्दतों ज़माने के अक़लमन्दों के बीच जारी रही है कि औरत भी इन्सानों की

प्रजाति (Species) में दाखिल है या नहीं? कुर्आन कहता है कि वह कोई और नहीं बल्कि तुम्हारे नपसों (जानों) का एक हिस्सा है, इतना ही उसके हुक्क का एहसास पैदा कराने के लिए काफी है लेकिन मज़ीद यह है कि इस दूसरे सेक्स के लिए ‘अज़वाज’ की लफ्ज़ लगाई है।

सिलसिल-ए-अनसाब (वंश-क्रम) में जिस तरह भाई का बस एक रिश्ता है जो बीच में (दोनों तरफ से) एक होता है यानी यह उसका भाई तो वह भी इसका ही भाई है, कोई और नहीं है और जब रिश्ता दोनों में एक हो तो हुक्क व फराएज़ (अधिकार और कर्तव्य) में भी बराबरी होना चाहिए। सिलसिल-ए-अनसाब में इस तरह की चीज़ जौजियत है यानी हमारी ज़बान में मियाँ-बीवी और शौहर-ज़ौजा दो नाम बोले जाते हैं मगर कुर्आनी शब्दों में जिस तरह मर्द अपनी बीवी के लिए जौज है उसी तरह औरत अपने शौहर के लिए जौज की हैसियत रखती है। वह एक ही रिश्ता है जो दोनों तरफ से काएम है, और इस जौजियत (वर होने में) में दोनों की बराबरी के दर्जे की अहमियत छुपी हुई है। जौज कौन होते हैं? वह दो जिनका एक साथ होना एक मक़सद के पाने के लिए ज़रूरी हो, जैसे दरवाज़े के दो पट या इंसान की दो आँखें या बिजली के मुस्बत व मन्फी (Positive & Negative) तार। इनमें से हर एक दूसरे का जोड़ा है, इसी तरह पैदा करने वाले ने मियाँ और बीवी को ‘जोड़े’ बनाया है। अब इनमें से किसी को यह हक़ नहीं है कि वह दूसरे की अहमियत का इन्कार करे। और इस हैसियत से उसे कम समझे। बेशक! अपनी सिन्फी (लिंग/Gender की) खुसूसियत के लेहाज़ से हर एक की खूबियाँ अपने एतेबार से होना चाहिए हैं। जिस तरह मुस्बत (Positive) तार का यह कमाल नहीं है कि उसमें मन्फी (Negative) की खूबियाँ

पैदा हों और मन्फी का यह कमाल नहीं है कि इसमें मुस्बत की खुसूसियत पैदा हो जाए। ऐसा होना नतीजा पाने के लिए नुक़सान देने वाला होगा। इसी तरह मर्द की तरक्की यह नहीं है कि इसमें औरत की खुसूसियतें पैदा हो जाएँ, और औरत की खूबी यह नहीं हो सकती कि उसमें मर्दानी बातें नज़र आने लगें, बल्कि मर्द का कमाल अपनी खूबियों की तरक्की से और औरत का कमाल अपने औरतपन के बढ़ने से जुड़ा है। इसीलिए इस्लामी शरीअत ने नमाज़ तक के अहकाम में दोनों के बीच फर्क रखा। कपड़ों में फर्क, खड़े होने के अन्दाज़ में फर्क, सजदे की शक्ल में फर्क, बैठने के तरीके में फर्क, सजदों के बाद खड़े होने में फर्क, धीरे व ज़ोर से पढ़ने में फर्क, यह सब काहे के लिए हैं? इसीलिए कि उसे मर्द होने का एहसास रहे, और उसे औरत होने का।

चूँकि यह दोनों सिन्फें (लिंग/Gender) जिस्मानी ताक़तों में खुली हैसियत से फर्क रखती हैं और इसीलिए हमारी नई बोल-चाल में भी उनमें से एक को सिन्फे नाजुक और सिन्फे लतीफ (Fair Sex) कहा जाता है, इसलिए फितरत का तकाज़ा यह है कि उनके फ़रीज़े भी उनकी बर्दाश्त की ताक़त के लेहाज़ से हों। इसलिए रोज़ी कमाने की ज़िम्मेदारी इस्लाम ने मर्द पर डाली और इसे बीवी के खर्च का ज़िम्मेदार ठहराया है और इसके जिस्म, जान इज़्ज़त का रखवाला बनाया जिसमें कभी-कभी हमला करने वाली ताक़तों और ज़माने की खींचातानियों का भी मुकाबला करना पड़ेगा। इस ज़रूरत से उसने एक हद तक औरत को उसकी मर्ज़ी का पाबन्द (बाध्य) बनाया। अगर जहाँ वह रहे वहाँ वह रहे ही न और जहाँ वह मना करे वहाँ जाने में कोई रुकावट न महसूस करे तो फिर मर्द, उसकी इज़्ज़त व आबरू की हिफाज़त ही क्यों कर

कर सकता है। जो शख्स किसी भी महकमे का निगराँ (Supervisor) हो, उस महकमे में यकीनन उसकी बात चलना और उसका हुक्म लागू होना चाहिए। इसलिए यही दायरा (Circle) वह है जिसमें यह कहना सही है कि मर्द की बात पर चलना बीवी पर वाजिब (ज़रूरी) है वरना दूसरे मामलों में यहाँ तक कि घर के कारोबार और अपनी ज़ाती ज़रूरतों में मर्द को यह हक नहीं है कि वह हुक्म की तरह औरत से नौकर की तरह काम ले। घर का खाना पकाना या झाड़ू देना या कपड़े वगैरा का ठीक करना इन सब चीज़ों को मुहब्बत के उसूल से पूरा होना चाहिए। अगर एक घर में माँ और बेटा यह दोनों रहते हों तो ज़ाहिर है कि जब बेटा रोज़ी कमाने के लिए जाएगा तो घर का काम माँ पूरा करेगी। मगर इसके माने यह तो नहीं है कि बेटे की इताअत इस मामले में माँ पर फर्ज़ हो गई। इसी तरह जब मियाँ-बीवी हों, और शौहर रोज़ी कमाने के लिए जाए तो घर के अन्दर के काम बीवी ही को पूरा करना चाहिए। यह ठिकाने की ज़रूरतों के मातहत एक शरीफ़ाना आपसी समझौता है। इसे इताअत (आज्ञा मानना/Obedience) कहना ग़लत है। बेशक मियाँ-बीवी के फाएदों से मुताल्लिक़ मामले, इज़्ज़त बचाने के बारे में जो पाबंदियाँ हैं वह इतनी सख़्त हैं कि औरत किसी सैर-सपाटे की जगह का ज़िक्र क्या, अपने माँ-बाप की अयादत (बीमारी में देखभाल) या जनाज़े में शामिल होने के लिए भी बिना शौहर की मर्ज़ी के नहीं जा सकती, और घर में किसी को बुला नहीं सकती, यहाँ तक कि शौहर अगर सगे भाई बल्कि बाप को रोक दे तो उसे बुलाना हराम होगा। लेकिन इसके मुकाबले में औरत के शादी वाले हुक्क को पूरा करने के लिए मर्द भी बिलकुल आज़ाद नहीं है। वह चार रातों तक बराबर बिना बीवी की मर्ज़ी के ग़ायब

नहीं रह सकता। कोई लम्बा सफ़र बिना उसकी मर्ज़ी के नहीं कर सकता। यह और बात है कि उसे हमारी बोल-चाल में इताअत नहीं कहते। मगर नामों से असलियत तो नहीं बदलती। वाक़ेआ तो यह मालूम होता है कि किसी एक की इताअत भी अपने से दूसरे पर नहीं है बल्कि दोनों एक सबसे बड़ी ताक़त, काएनात के पैदा करने वाले की तरफ से क़ानून के पाबन्द हैं। जितना उसने ज़रूरी जाना, उसे पाबन्द बनाया, और जितना ज़रूरी समझा, इसे पाबन्द ठहरा दिया। इन दोनों को उसकी इताअत लाज़िम है। चूँकि मियाँ-बीवी में एक तरह की बराबरी ज़रूर पाई जाती है, इसलिए शरीअत (धर्म के क़ानून) ने उनमें कुफ़ुवियत यानी बराबर का होना ज़रूरी समझा है, मगर याद रहे कि इस्लाम में ऊँच-नीच का ख़याल हसब-नसब (ख़ानदान) के मेयार पर नहीं है तो इस शरीअत में बराबरी होने का भी ख़ानदानी ख़याल नहीं रखा गया। यहाँ कुफ़ुवियत इसी मेयार की है जिस मेयार की ऊँच-नीच है यानि “इन्ना अकरमकुम इन्दल्लाहि अत्क़ाकुम” (तुममें खुदा के नज़दीक ज़्यादा इज़्ज़त वाले वे हैं जो [खुदा से] ज़्यादा डरते हैं)। एक दर्जा कुफ़ुवियत का तो वह है जो शौहर और बीवी दोनों तरफ से सही है, और वह इस्लाम है, शिर्क के मुक़ाबिल में। जिस तरह औरत मुसलमान हो तो उसकी शादी किसी शिर्क करने वाले के साथ किसी तरह की भी नहीं हो सकती। इसी तरह मुसलमान मर्द की शादी शिर्क करने वाली औरत के साथ किसी रूप में भी ठीक नहीं है। और इसी तरह ग़ैर मुश्रिक, कोई भी तरह का काफ़िर हो तो दाएमी (स्थायी) निकाह में वह दोनों तरफ से बाधा बनने वाला है। इसके बाद चूँकि खाने और खर्च की ज़िम्मेदारी और इज़्ज़त की हिफाज़त वगैरा के लेहाज़ से बहरहाल एक तरह की बड़ाई मर्द को

होती ही है और इसलिए भी कि वह पैदाईशी ताक़तवर सिन्फ (प्रौढ़ / Gender) है और फिर इस दुनिया में यह क्यों यकीन किया जाए कि हर एक हकों का पाबन्द ही रहेगा इसलिए अमल से वह अपनी जिस्मानी ताक़तों की बुनियाद पर हद से आगे भी जा सकता है, इसलिए लड़की के लिए शौहर के चुनने में कुफ़ु(वर) का मेयार इससे ज़्यादा बढ़ गया जितना लड़के के लिए बीवी की तलाश (खोज) में है।

इसलिए जाफरी फ़िक्ह (धर्मविधि शास्त्र) में अहले किताब औरत के साथ दाएमी निकाह तो नहीं हो सकता लेकि ख़त्म हो जाने वाले निकाह जिसका क़ानून ही ज़रूरत के ख़ास मौकों को देखते हुए बनाया गया है, किताबिया औरत के साथ जाएज़ है जबकि मुशिरका के साथ किसी सूरत से जाएज़ नहीं। और इसके उलटे यानी लड़की का अक्द अहलेकिताब के साथ किसी शक्ल में भी ठीक नहीं। यह इसका सुबूत है कि किफ़ायत (वर) का मेयार (मानक / Standard) उधर से ज़्यादा सख़्त है। दूसरा गवाह इसका यह है कि मुसलमानों के मुख़तलिफ़ फिरकों में अगर मर्द मज़हबे हक़ (सच्चे मज़हब) का मानने वाला है तो बीवी के लिए कोई पाबन्दी लाज़मी नहीं है कि वह किस फिरके की हो लेकिन लड़की अगर शीआ हो तो शौहर को भी शीआ होना चाहिए और इसके ख़िलाफ़ हो तो बहुत से उलमा के नज़दीक अक्द बातिल (ग़लत) है। यह दूसरा गवाह है उधर से किफ़ायत के हुक्म की शर्त का। इसी वजह से मासूमीन के यहाँ बीवी के चुनने में इतना सख़्त मेयार सामने नहीं रखा गया मगर लड़की के लिए शौहर के चुनने का मसला इतना सख़्त था कि पिछली उम्मतों में एक मासूमा जो पैदा हुई यानि हज़रत मरियम (अ0) तो चूँकि उनके बराबर वाला कोई मासूम उस वक़्त ऐसा न

था तो कुदरत ने फ़ितरत के आम उसूल को तोड़कर बिना किसी मर्द के उन्हें ईसा (अ0) ऐसा बेटा अता (प्रदान) फरमा देना ज़रूरी समझा मगर शादी उनकी किसी के साथ पसन्द नहीं की। खुदा को आख़री रसूल हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा (स0) के लिए उनकी रिसालत के मफ़ाद (हित) को पूरा करने के मक़सद से इस्मते कामिला (पूरा-पूरा मासूम होने) के मेयार की एक बेंटी देना ज़रूरी था, तो इसके लिए हज़रत अब्दुल मुत्तलिब के वक़्त से एहतेमाम करके एक नूर के दो टुकड़े किये ताकि फातिमा (स0) के पहले रसूल (स0) के पास अली (अ0) मौजूद हों जिनका रिश्ता सय्यिद (स0) के साथ हो सके। इस बुनियाद पर पैग़म्बर (स0) ने यह नहीं फरमाया कि: “लौ ला फातिमतु लम यकुन कुपुवन लिअलिथ्यिन” यानी अगर फातिमा (स0) न होती तो अली (अ0) का कोई कुफ़ु न होता। यह क्योंकि फरमाते अगर वह किफ़ायत जो इस्लाम में ज़रूरी है न होती तो अली बिन अबी तालिब (अ0) जनाबे फातिमा (सालमुल्लाहि अलैहा) के बाद भी उम्मुल बनीन वगैरा से क्यों अक्द फरमाते। बेशक यह फरमाया कि: “लौ ला अलिय्युन लम यकुन कुपुवन लिफातिम—त आदमु वमन दूनहु” (अगर अली (अ0) न होते तो फातिमा (स0) को कोई कुफ़ु (वर) आदम (अ0) से लेकर इस वक़्त तक न था।) यह कुफ़ुवियत ख़ानदान के एतेबार से हरगिज़ न थी वरना अली (अ0) के जितने भाई थे वह सब नसबी खुसूसियत में एक जैसे थे। तालिब व अक़ील व जाफ़र सब अमीरुलमोमिनीन के सगे भाई थे। अलग-अलग माँ से भी न थे कि माँ के एतेबार से नसब में फर्क हो सकता। यह ख़याल भी ग़लत है कि तालिब और जाफ़र वगैरा चूँकि उम्र में सय्यिद-ए-आलम (स0) से बहुत ज़्यादा (बड़े) थे इसलिए बहस से बाहर ठहरा दिये गए

इसलिए कि हदीस में आखिर में “आदमु वमन दूनहु” का जुमला बताता है कि इस में उम्र का क्या ज़िक्र सदी और कर्न और हज़ारों साल के फर्क का भी लेहाज़ नहीं है और पूरी दुनिया की उम्र के इंसान पैग़म्बर (स0) के सामने हैं। इस सूरत में मानना पड़ेगा कि यह कुफ़ुवियत बढ़ाई और सिफ़तों (अच्छाइयों) और ईमान के मरतबे के हिसाब से है।

अब ज़ाहिर है कि ऐसी इज़्ज़त वाली और अज़ीज़ बेटी के अक़द में बाप का दिल क्या कुछ नहीं चाह सकता कि इस अक़द को किस शान शौकत और तड़क-भड़क के साथ किया जाए। मगर तारीख़ (इतिहास) व हदीस के पन्ने अपने दामन में अक़द की पूरी तस्वीर लिये हुए हैं कि वह किस तरह हुआ। इतना तो ज़रूर लेहाज़ रखा गया कि पैग़ाम अली इब्ने अबी तालिब (अ0) की ज़बान से हो और यह हकीक़त में औरत की खुददारी (स्वाभिमान) को बचाए रखना था कि चाहने वाला ताक़तवर सिन्फ़ यानी मर्द होना चाहिए और दूसरी सिन्फ़ की फर्द (इकाई) को ज़रूरत रखने वाला (ग़र्ज़ू) नहीं साबित होना चाहिए। हाँ! जब अली इब्ने अबी तालिब (अ0) हाज़िर हुए और बन्द अन्दाज़ में रिश्ता माँगा तो रसूल (स0) ने बे ठिटक़ इरशाद फरमाया कि यह तो तुम अब कह रहे हो और खुदा अर्श पर इस मसले को तय फरमा चुका है। मालूम होता है कि यहाँ दामाद का चुना जाना तक रसूल (स0) की ज़ाती राय से न होता था बल्कि वह खुदा का चुना हुआ होता था। बस अब तकल्लुफ़ व रसमों को किनारे करते हुए रसूल (स0) फरमाते हैं: “ऐ अली (अ0) तुम्हारे पास दुनिया के माल में क्या है?” अर्ज़ करते हैं, “हुज़ूर को मालूम है। बस एक घोड़ा है, एक तलवार है और एक ज़िरह (कवच), इसके सिवा कुछ नहीं।” फरमाया, “घोड़े और तलवार की तुम्हें खुदा के रास्ते में जिहाद के

लिए ज़रूरत है, मगर ज़िरह की ज़रूरत नहीं है इसे बेच दो।” अली इब्ने अबी तालिब (अ0) ने उसे बेच दिया जिससे चार सौ दिरहम (चाँदी के सिक्के) कीमत (मूल्य) मिली। यह ही हज़रत सय्यिद (स0) का महेर ठहरा। और इस रक़म से जनाबे रिसातलत मआब (रसूल स0) ने नये घर के लिए गृहस्थी का सामान ख़रीद कर बेटी और दामाद के ज़िन्दगी गुज़ारने का सामान कर दिया और इस तरह इमामुल मुत्तकीन (अल्लाह से डरने वालों के प्रमुख/नेता) की शादी सय्यिदतु निसाइल आलमीन (जगनारी मुखिया) (स0) के साथ मुकम्मल हो गई।

अफ़सोस है कि हम लोगों ने रसमों और बन्धनों में घिरकर इस बेहतरीन सुन्नत (सदावृत्ति) को सामने न रखा जो पैग़म्बरे इस्लाम (स0) ने पेश फरमाया था। मुबारकबाद के काबिल हैं जनाब सै0 इब्ने हुसैन साहब नक़वी कि इन्होंने अपने यहाँ की पिछली शादियों में भी इन खुसूसियतों को नज़र के सामने रखा और एक ख़ास चीज़ तो महेर की है जिसमें हमारे यहाँ आम तौर से इतनी ज़्यादाती कर दी जाती है कि कभी-कभी अक़द के सही होने में इश्क़ाल (शुबहा) पैदा हो जाने का इम्कान (सम्भावना) है। अगर फातमी महेर को सामने रखा जाए तो यह सूरतें कभी न पैदा हों। मगर फातमी महेर के लेहाज़ से पहले जो एक सौ सात रुपया रखा जाता था वह अब ठीक नहीं रहा क्योंकि ‘शरअी दिरहम’ चाँदी के एक मिस्क़ाल का होता था अब रुपये में चाँदी जैसे ख़त्म हो जाने की वजह से वह हिसाब ग़लत हो गया है। जैसा कि ज़कात के निसाब वग़ैरा के हिसाब में भी जो जनाब गुफ़रानमआब (अज़लल्लाह मक़ामहु) के समय से चल रहे थे अब ठीक नहीं रहे हैं। ज़ाहिर है कि यह हिसाब लगाना कि मौजूदा रुपये में कितनी मिक्दार (मात्रा) भर चाँदी है और

इस हिसाब से रुपयों की गिनती तय करना बहुत मुश्किल है, इसलिए अब सही सूरत यह है कि चाँदी का इतना वज़न महेर में रखा जाए जो जनाबे सय्यिदा (स0) के महेर के बराबर हो। इसलिए इस अक्द में शायद पहली बार यह मिसाल (उदाहरण) बनायी जा रही है कि यहाँ महेर एक सौ सत्तरा तोला चाँदी तय हुआ है। फातमी महेर जब तय करना हो तो यही सूरत अब ज़्यादा ठीक मालूम होती है।

दूसरी बड़ी अहम बात यह है कि इस ज़माने में घरेलू ताल्लुकात (सम्बन्ध) अकसर ख़राब दर्जे पर पहुँचा जाते हैं। ऐसा भी होता है कि शौहर बीवी को छोड़ कर चला गया और खाने-कपड़े की कोई ख़बर नहीं लेता। पाकिस्तान बन जाने के बाद ऐसा बहुत हो गया है कि शौहर पाकिस्तान चला गया और बीवी यहाँ रह गई। ऐसी सूरतों में लोग उलमा के पास आकर फरयादें करते हैं और ज़्यादा तर इस बारे में उलमा बेबसी महसूस करते हैं। इसके लिए मैंने बीस पच्चीस साल पहले मदरसतुल वाएज़ीन के बयानों में से एक बयान जो इमामिया मिशन लखनऊ से किताब की सूरत में छप चुके हैं इस सूरत पर ध्यान दिलाया था कि शरीअत के आम क़ानूनों के अन्दर इस मुश्किल का हल मौजूद है। वह यह है कि बीवी निकाह के वक़्त शौहर से तलाक़ की वकालत ले ले और निकाह का अक्द इस तलाक़ की शर्त के साथ हो और यह शर्त अक्द के मत्न (Text/प्रारूप) में रख दी जाए। इस सूरत के साथ फिर कुछ दूसरे उलमा भी एक राय हो गए। इसलिए अख़बारों में भी यह सूरत छप चुकी है मगर लोग अक्द के वक़्त तलाक़ के नाम के आने को बुरा शगुन समझते हैं और इस सूरत पर अमल नहीं करते। लेकिन बाद में आकर फरियादें करते हैं। इस अक्द में इस शर्त को रख कर और शौहर से

बीवी को तलाक़ की वकालत दिलवाकर यह भी अमली मिसाल (कार्य-उदाहरण) बनाई जा रही है। मैं दुआ करता हूँ कि खुदा इस अक्द को दोनों फरीकों (पक्षों) के लिए मुबारक और नेक फरमाए, मुहम्मद (स0) और उनके पाक अहलेबैत (अ0) के हक़ के (लिए)।

तलाक़ की वकालत की शर्तें

“अगर शौहर एक साल तक बिना किसी वजह के खाना-कपड़ा न दे, चाहे उस शहर में रहकर चाहे यहाँ से किसी दूसरी जगह चले जाने पर, बीवी के साथ बुरा सुलूक जैसे मार-पीट या ऐसी सख़्त बातें जो गाली गलौज में दाख़िल हो और जो ग़ैर शरीफ़ाना (अशिष्ट) सूरत रखती है तो बीवी को हक़ (अधिकार) होगा कि वह शौहर की तरफ से वकील की हैसियत से खुद या किसी दूसरे को वकील बनाकर और दो आदिल गवाहों के सामने तलाक़ का सीगा जारी करके तलाक़ हासिल कर ले।”

इस तरह की शर्तें पहले से दोनों तरफ से तै हो जानी चाहिएँ। यह शर्तें दोनों तरफ की मर्ज़ी से पहले से तै हो जानी चाहिएँ ताकि अक्द के वक़्त इन शर्तों का हवाला शर्तें मालूम के लफ़्ज़ से दे दिया जाए।

निकाह के सीगे

औरत का वकील कहे: अनकह्तु मुवक्किलती मुवक्किल-ल-क अलल महरिल मालूमि बिश्शरतिल मालूम।

(मैं मालूम (ज्ञात) महेर पर मालूम शर्त के साथ अपनी मुवक्किला का निकाह आपके मुवक्किल से करता हूँ।)

मर्द का वकील कहे: क़बिल्तुन्निका-ह

बकिया..... पेज 17 पर

मुबाहला

इमादुल उलमा अल्लामा सै० मुहम्मद रज़ी साहिब किब्ला

फिर जो कोई तुम से इस बात में हुज्जत करे, इसके बाद कि तुम्हारे पास (इसका) इल्म पहुँच चुका है तो तुम उनसे कह दो कि अच्छा आओ हम अपने बेटों को बुलाएँ और तुम्हारे बेटों को भी और अपनी औरतों को और तुम्हारी औरतों को भी और अपने नपसों को और तुम्हारे नपसों को भी। फिर हम (खुदा के दरबार में आजज़ी) के साथ इत्तेजा करें और झूठों पर अल्लाह की लानत भेजें। बेशक यही है सच्चा वाक़ेआ और कोई माबूद नहीं सिवाए अल्लाह के। और बेशक अल्लाह ही ज़बरदस्त हिकमत वाला है। फिर अगर यह लोग अब भी क़बूल न करें तो यकीनन अल्लाह फसादियों को ख़ूब जानने वाला है। तुम कह दो कि ऐ अहले किताब आ जाओ एक ऐसी बात की तरफ जो हम में तुम में बराबर है वह यह कि हम सब सिवाए अल्लाह के किसी और की इबादत न करें और किसी को भी उसका साझी न ठहराएँ और हम में से कोई शख्स किसी को भी अल्लाह के अलावा परवरदिगार न करार दे। फिर अगर वह लोग फिर जाएँ तो (ऐ मुसलमानों) तुम कह दो कि गवाह रहना हम तो मानने वाले हैं।

तशरीह व तफसीर:

“हाज्जक” में “हाज्ज” भूतकाल का लफ्ज़ है, इसका मसदर “मुहाज्जतुन” है जिसके माने हैं आपस में तकरार व हुज्जत करना और झगड़ना। “नबतहिल” का मसदर “इब्तेहाल” है मशहूर माने हैं आजज़ी और गिड़गिड़ाने के साथ अल्लाह के दरबार में दुआ करना मगर यहाँ “इब्तेहाल” “मुबाहला” के माने में आया है। जो “भलुन” से

बना है और इसके माने हैं बददुआ करना और लानत करना इस तरह “मुबाहला” के माने होंगे आपस में एक का दूसरे के लिए बददुआ करना कि अगर वह झूठा है तो उस पर अल्लाह की लानत हो और वह तबाह व बर्बाद हो जाए। इब्तेहाल से यही माने मुराद हैं। “कससुन” का लफ्ज़ बहुवचन नहीं है बल्कि एकवचन है। माने में किस्सों और ख़बरों से तैयार एक ऐसा बयान और ऐसी कहानी जिसका एक हिस्सा दूसरे हिस्सों से जुड़ा और मुसलसल हो मगर जब “कससुन” के बजाए “किससुन” बोलते हैं “काफ” पर ज़ेर के साथ तो “किस्सा” का बहुवचन मुराद होता है यानी बहुत से किस्से और कई कहानियाँ।

हज़रत ईसा इब्ने मरियम (अ०) के बारे में पूरी वज़ाहत के साथ सही किस्सा बताकर अब हुज़ूर सरवरे काएनात (स०) से इरशाद हो रहा है कि अगर इस खुले बयान के बाद भी कोई शख्स तुम से हुज्जत करे और अपनी ज़िद पर कायम रहे और झूठे अक़ीदों पर जमा रहे तो ऐसे सभी लोगों को तुम मुबाहला की दावत दे दो और अपनी मुख़ालिफों से कहो कि हम तुम सब मिलकर अपने बेटों, अपनी औरतों और अपनी जानों के साथ मुबाहला के लिए निकलें और खुदा के दरबार में आजज़ी के साथ सवाल करें कि हम दोनों फरीकों में से जो झूठा हो उस पर अल्लाह अपनी लानत नाज़िल फरमाए। मुबाहला की आयत और इससे जुड़ी दूसरी आयतों के नाज़िल होने की वजह नसारा की वह जमात थी जो नजरान के ईसाईयों की तरफ से हज़रत ईसा (अ०) के बारे में सरवरे काएनात (स०) से बहस व बातचीत

करने के लिए 9 हिजरी में मदीने आई थी। नजरान, यमन का एक मशहूर शहर है जो उस ज़माने में ईसाईयत का बड़ा मरकज़ था। ईसाई जमाअत में साठ आदमी थे जिनमें से चौदह लोग उनके सरदार थे और उनमें से तीन नुमाइन्दे पूरी जमाअत की सरदारी कर रहे थे। “अब्दुल मसीह आकिब” जमाअत का अमीर था, “ऐहम” जमाअत का मुशीर था और “अबुहारसा बिन अलकमा” उनके सबसे बड़े मज़हबी रहनुमा और बहुत बड़े दीनी सरदार की हैसियत रखते थे। अल्लामा फख़रुद्दीन राज़ी और अल्लामा इब्ने हजर असकलानी लिखते हैं कि जिस वक़्त यह जमाअत मदीने के इरादे से रवाना होने लगी तो जिस ख़च्चर पर अबुहारसा बिन अलकमा सवार था उसने ठोकर खाई। यह देखकर उसके भाई “कुर्ज़ बिन अलकमा” की ज़बान से निकला “तइसल अबअद” दूर वाला शख्स हलाक हो जाए। उसकी मुराद खुदा की पनाह सरवरे दो आलम (स0) की पाक ज़ात थी। यह सुनते ही अबुहारसा ने कहा “तइसल उम्मुका” तेरी माँ हलाक हो जाए। कुर्ज़ अपने भाई की यह बात सुनकर हैरान रह गये। फिर उनके पूछने पर कि अबुहारसा ने ऐसा क्यों कहा उसने जवाब दिया: खुदा की क़सम मैं ख़ूब जानता हूँ कि मुहम्मद वही रसूल हैं जिनकी खुशख़बरी तौरात व इन्ज़ील और दूसरी आसमानी किताबों में मौजूद है। इसलिए कुर्ज़! तुम उनकी शान में ऐसी गुस्ताख़ न करो। कुर्ज़ बोले कि फिर तुम उनकी नुबुव्वत का एलान क्यों नहीं कर देते। उसने जवाब दिया कि अगर मैं इस का एलान कर दूँगा तो ईसाई सलतनतों की तरफ से जो बेशुमार दौलत मुझे मिल रही है और ईसाई दुनिया में जो मेरी बेइन्तिहा इज़्ज़त व बढ़ाई है वह सब एक लम्हे में ख़त्म होकर रह जाएगी। यही वह बात थी जो कुर्ज़ के दिल में

चुभती रही और आख़िरकार वह कुछ ज़माने बाद इस्लाम की इज़्ज़त पाकर साहबए केराम की जमाअत में दाख़िल हो गए। मुबाहले की आयत की शाने नुजूके के सिलसिले में इस्लामी मुहद्दिसीन व मुफ़स्सरीन ने एकमत से कहा है कि जब नजरान के लोग सब कुछ समझाने के बाद भी अपनी गुमराही पर अड़े रहे तो हुज़ूर (स0) ने खुदा के हुक्म से उन्हें मुबाहले की दावत दी जिस पर जमाअत के लोगों ने एक रोज़ की मोहलत माँगी। दूसरे दिन जब वह लोग आपकी ख़िदमत में हाज़िर हुए तो देखा कि सरवरे काएनात (स0) गोद में अपने छोटे नवासे हज़रत इमाम हुसैन (अ0) को लिये हुए हैं, दूसरे नवासे हज़रत इमाम हसन (अ0) की उंगली पकड़े हुए हैं। रसूल (स0) की बेटी हज़रत फातिमा ज़हरा (स0) आपके पीछे हैं और उनके पीछे शेर ख़ुदा अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली (अ0) हैं। इस शान से हुज़ूर बाहर तश्रीफ़ लाए हैं और अपने पाक अहलेबैत (अ0) से फरमा रहे हैं कि जब मैं झूठों पर बद्दुआ करूँ तो तुम सब मिलकर आमीन कहना। यह नूरानी मन्ज़र देखकर उनके सबसे बड़े मज़हबी सरदार ने जमाअत वालों से कहा कि मैं इस वक़्त ऐसे चेहरे देख रहा हूँ जो अगर दुआ कर दें तो पहाड़ भी अपनी जगह ठहर न सकें और सरक जाएँ तुम क्या चीज़ हो, इनसे मुबाहला करके बर्बादी में न पड़ें वरना सारी ज़मीन पर एक ईसाई भी बाकी न रहेगा। आख़िर उन लोगों ने मुकाबले का इरादा छोड़ दिया और यमन वापस चले गये इस पर हुज़ूर (स0) ने इरशाद फरमाया कि अगर वह मुझ से मुबाहला करते और मैं बद्दुआ कर देता तो मदीने की पूरी वादी उन पर आग बनकर बरस पड़ती और एक ही साल के अन्दर दुनिया भर के सभी ईसाई ख़त्म हो जाते और नजरान का नाम व निशान भी बाकी न रहता।



एक सबक इस्लाम से

सफ़वतुल उलमा मौलाना सैय्यद क़ल्बे आबिद साहिब किब्ला ताबा सराह

पिछले शुमारे से आगे

2- "मुरक्कब" नहीं (यौगिक नहीं):- यौगिक उसे कहते हैं जो दो या दो से अधिक अंशों से मिलकर बने। जैसे मनुष्य का शरीर हाथ, पांव, आँख, नाक, कान से मिलकर बना और वह स्वतः काया और प्राण से यौगिक है। यदि अल्लाह भी यौगिक होगा तो वह भी अपने अस्तित्व में अपने अंशों का मुहताज होगा और जो खुद वजूद में मुहताज होगा वह खुदा नहीं हो सकता।

3- "मुतहैयिज़" नहीं:- मुतहैयिज़ उसे कहते हैं जो किसी जगह में हो। उदाहरण के लिए मनुष्य पृथ्वी पर है हवा उसको घेरे हुए है। पृथ्वी उस वातावरण में है जो उसके चारों ओर है और सितारे अंतरिक्ष में हैं। किसी हैयिज़ या पात्र में वही वस्तु होती है जो शरीर रखती हो अगर ईश्वर साकार होता तो यौगिक हो जाता और यौगिक हो जाता तो मुहताज हो जाता।

4- हुलूल (अतः प्रवेशन) ठीक नहीं:- हुलूल कहते हैं किसी चीज़ का किसी पात्र में इस तरह समा जाना कि जिसमें समाए उसके आकार में सम्वृद्धि न हो जैसे प्राण शरीर में समाता है। हुलूल का मतलब है उस चीज़ में सीमित हो जाना जिसमें हुलूल करे। अल्लाह यदि सीमित हो गया तो उसकी असमर्थता का कारण बन जाएगी।

5- "महल-ए-हवादिस नहीं":- जिस प्रकार सृष्टि की सभी चीज़ें घटनाओं से प्रभावित होती

हैं। कम से कम काल पात्र के प्रभावी होने को नकारा नहीं जा सकता। मनुष्य बच्चे से जवान होता है और जवान से बूढ़ा, स्वस्थ रहता है और कभी बीमार हो जाता है। इसी प्रकार यदि अल्लाह को "महल-ए-हवादिस" मान लिया जाए तो चूँकि प्रभावी सबल और प्रभावित दुर्बल माना जाएगा। और अल्लाह की शक्ति को भी सीमित मानना पड़ेगा और किसी को उससे सबलतम मानना होगा।

दूसरे यह बात भी है कि परिवर्तित होना विनाश योग्य होने की ओर संकेत करता है। क्योंकि परिवर्तित के मानी हैं किसी न किसी हैसियत से नष्ट हो जाना। बचपन नष्ट हुआ जवानी आयी। जवानी नष्ट हुई बुढ़ापा आया यदि ईश्वर परिवर्तनशील होगा तो उसे विनाश योग्य मानना होगा। जबकि वह "क़दीम" है सर्वकालिक है। यह कहना कि परिवर्तन हस्ती में नहीं गुणों या विशेषताओं में होता है वहाँ ठीक हो सकता है जहाँ 'ज़ात और सिफ़ात' अर्थात् हस्ती और गुण अलग-अलग हों। लेकिन जहाँ दोनों एक हों वहाँ सिफ़त या गुण में बदलाव का मतलब होगा ज़ात या हस्ती में बदलाव।

6- "मरई" नहीं:- अल्लाह को देखना सम्भव नहीं। कुर्आन मजीद में है कि "उसको आँख नहीं देख सकती।" अपनी उम्मत (पंथ) द्वारा विवश किये जाने पर जनाबे मूसा (अ०) ने दुआ की, (हे मालिक) "मुझे अपना दर्शन करा दे।" जवाब मिला, (ए मूसा) "तुम मुझे कदापि न देखोगे।"

कुछ लोगो का यह विचार है कि अल्लाह क़यामत में ईमान लाने वालों को अपना जलवा दिखाएगा। यह विचार अगर ठीक होता तो कुर्आन इतनी ताकीद के साथ नकारता नहीं। देखी वही चीज़ जा सकती है जो किसी दिशा में हो। दिशा में वही वस्तु होती है जो साकार हो। यदि ईश्वर साकाल होता तो देखा भी जाता।

देखना केवल रंग का सम्भव है। रंग क्या है! प्रकाश की वह तरंग जो किसी शरीर से परिवर्तित होकर पलटे। जिसको उस शरीर ने अपने में समो न लिया हो। क्या अल्लाह के लिए यह कल्पना सही हो सकती है! क्या वह कोई आकार है जो प्रकाश की कुछ लहरों को समो लेता है कुछ को पलटा देता है। यदि यह सही नहीं तो उसका देखा जाना भी सम्भव नहीं। उसको वाह्य नेत्रों से नहीं अतः नेत्रों से देखा जा सकता है। उसको चेहरे की आँखों से नहीं हृदय की आँखों से देखना सम्भव है। वह खुद नहीं उसकी शक्ति और सामर्थ्य के जलवे दिखाई देते हैं।

हर सू तेरी कुदरत के हैं लाखों जलवे।

हैरों हूँ कि दो आँखों से क्या-क्या देखूँ।।

(मीर अनीस)

7— “मुहताज” नहीं:— मुहताज होने का अर्थ है किसी सम्पूर्ण गुण का लुप्त होना और उसकी उपलब्धि की प्रतीक्षा करना और यह सूरत खुदा के लिए सम्भव नहीं। क्योंकि वह अस्तित्व ही अस्तित्व है। उसके लिए अनस्तित्व की कल्पना ही नहीं की जा सकती। इसके अलावा यदि कोई सम्पूर्ण गुण बाद में प्राप्त हो तो परिवर्तन अनिवार्य ठहरेगा और अल्लाह महल-ए-हवादिस हो जाएगा। जिसकी रद्द पहले ही की जा चुकी है।

8— सिफ़ाते ज़ाएद नहीं:— अल्लाह की विशेषताओं या गुणों के विषय में एक दृष्टिकोण तो यह है कि चूँकि गुण ज़ात अथवा हस्ती से अलग चीज़ है। अगर अल्लाह के लिए गुण मान लिये गए तो बहुत क़दीम या अनादि मानने पड़ेंगे और क़दीम अथवा अनादि एक ही है। इसलिए अल्लाह का सगुण मानना सही नहीं।

यहाँ प्रश्न यह उठता है कि सभी आकाशीय ग्रंथों, पैग़म्बरों और कुर्आन ने अल्लाह के जो गुण गिनाये हैं कि ज्ञाता है, शक्तिमान है तो इसका अर्थ क्या हुआ, तो उन लोगों ने कहा कि ज्ञाता का अर्थ है अज्ञानी नहीं, शक्तिमान का अर्थ है विवश नहीं अर्थात् तमाम सिफ़ाते सुबूतिया का हासिल सिफ़ाते सलबिया है।

कुछ लोगों ने कहा अल्लाह उसी तरह ज्ञाता है जैसे हम, उसी तरह शक्तिमान है जैसे हम, यानी उसके गुणों की भी वही स्थिति है जो हमारे गुणों की है। हमारी ज़ात और सिफ़ात अलग-अलग हैं। उसी तरह अल्लाह की ज़ात और सिफ़ात अलग-अलग है और यह सिफ़ातें अल्लाह की ज़ात में स्थापित हैं। परन्तु शीओं का मार्ग इसके बीच का है। एक तो इससे अनिवार्य हो जाता है कि अल्लाह की ज़ात गुण रहित हो, दूसरे इसका कोई मतलब ही नहीं कि ज्ञाता है न कहो बल्कि यह कहो कि अज्ञानी नहीं। ज्ञाता और अज्ञानी के बीच कोई चीज़ नहीं। “जाहिल नहीं” का मतलब सिवाय इसके कि आलिम है और क्या हो सकता है! और अगर सिफ़ात ज़ात से अलग हों तो अनेक क़दीम मानने पड़ेंगे। बल्कि चूँकि ईश्वर के गुण असंख्य हैं इसलिए असंख्य क़दीम भी मानना पड़ेंगे।

(जारी)

‘ग़दीर’ मुबारक

मु० र० आबिद

10 हि०/632 ई० का हज

लगभग पूरा अरब देश इस्लाम अपना चुका। इस्लाम के फैलते हुए असर के साये में आसपास के देशों के भी और दूर-दूर तक के लोग आते हुए। प्यारे नबी (स०) सभी को खास तौर से अपने साथ हज्ज में शामिल होने का न्योता दे चुके। पूरा मुसलमान जगत बड़े जोर-शोर से, बड़े हर्षोल्लास से और बड़े गर्व नाज़ से बड़ाई के इस शुभ पाक मौके को हाथ से जाने देना नहीं चाहता। हज्ज भी जुमे को पड़ रहा है, हज्जे अकबर (महानतम हज्ज) है। फिर रसूल (स०) का मुबारक साथ कितना विशिष्ट है, शरफ़ (प्रतिष्ठा) वाला है ये उन्हीं सच्चे मुसलमानों का दिल जानता है। लोग गुट-गुट, दल-दल, आते जा रहे हैं। उनकी गिनती 6 अंकों (Digits) में पहुँच चुकी है। रसूल (स०) के समय का सबसे बड़ा मजमा है। माहौल में पकाई और पुण्य ही घुला हुआ है। तलबिया (अल्लाहुम्मा लब्बैक/ हाँ! हाँ!! ऐ अल्लाह हाज़िर हूँ।) की आवाज़ें काबे का तवाफ़ (परिक्रमा) करती हुई।

ऐसे हज्ज के बाद, कोमल मन से सब बिदाई लेते, अपने-अपने घरों की ओर जाते हुए, प्यारे नबी (स०) भी मदीने की ओर बढ़ते हुए। ग़दीरे खुम (खुम का तालाब ग़दीर = ताल) से सबके रास्ते कटते हैं। यहाँ पहुँते ही वही (ईश्वरवाणी) आती है:

“ऐ रसूल, जो (हुक्म) आप पर उतारा जा चुका है उसे पहुँचा दीजिये, यदि यह न किया तो रिसालत (उसका संदेश) पहुँचाया ही नहीं, अल्लाह आपको लोगों (की बुराई) से बचाए रखेगा, अल्लाह

तो नास्तिक (काफ़िर) लोगों की हिदायत (सन्मार्ग दिखाने) नहीं करता।” (“सूरा माएदा’ आयत 67)

[अरे यह क्या? खुदा तो अपने प्यारे नबी (स०) से बड़े प्यार भरे लहजे में बात करता है। यहाँ पूरा-पूरा सरकारी लहजा है। रसूल (स०) लगभग पूरा दीन/धर्म पहुँचा चुके हैं, और बड़ी पीड़ाएँ, बड़ी कठिनाइयाँ झेलकर। कोई ऐसी ही बड़ी बात पहुँचाने को रह गई है जिसके न पहुँचाने को माने सिरे से रिसालत का कोई काम न होना बताया जाता है। लेकिन कुछ तो था जिस पर रसूल (स०) ठिठक रहे थे और जिस पर आयत में सुरक्षा का वादा है। अब देखना है प्यारे नबी (स०) क्या करते हैं, क्या पहुँचाते हैं।]

बहुत बड़ा मैदान है। दोपहर का समय (इतवार 18 ज़िलहिज्जा 10 हि०/632 ई०) है। रसूल (स०) रुक जाते हैं। आगे बढ़ जाने वालों को वापस बुलाते हैं। पीछे आने वालों का रास्ता देखते हैं। सबके मन में खलबली। यह क्या माजरा है। सबकी आँखें और मन पूरी तरह रसूल (स०) की ओर। [यह सब ऊपर वाले की ओर से कि कोई यहाँ की बात भूल न सके। अब भी कोई भूल जाए तो अचम्भा! दुर्भाग्य!! शरारत!!!] रसूल (स०) ने ऊँट की गदिदियों को इकट्ठा कर मिंबर बनाया। इस नये Radymade मिंबर पर आप (स०) तशरीफ़ ले जाते हैं। प्रवचन (खुतबा) देते हैं। खुदा की हम्द संस्तुति के बाद उसके संदेश और अपने धर्म प्रचार की बात करते हैं। अपने जल्दी जाने का, विदा होने का इशारा भी कर देते हैं। अब तक के प्रचार और धर्म की बातें बताने के चलन में कुछ नयापन लाते हैं, थोड़ा सा अलग

ढब। लोगों से पूछते हैं: "क्यों तुम्हारी जानों पर तुम्हारा ज़्यादा हक (अधिकार, आधिपत्य) है या मेरा?" सब एक बोल कहते हैं: "आपका, बेशक आपका ही ज़्यादा हक है।" (फिर अपने दोनों हाथों से हज़रत अली (अ0) को ऊँचा कर सामने कर कहते हैं) 'जिसका मैं मौला हूँ उसका यह अली (अ0) भी मौला* है'

वहीं कुछ शक शंका भी सर उठाती है। विरोध की आवाज़ भी जागती है। कुछ आवाज़ें रसूल (स0) से पूछती हैं 'क्या ये बात आप अपनी ओर से कह रहे हैं या खुदा की बात है' प्यारे नबी (स0) कहते हैं: 'मैंने अपनी ओर से कुछ नहीं किया, न कुछ कहा। जो है वह खुदा की ओर से, उसी का हुक्म (आदेश) था जो मैंने किया, जो कहा, जो बताया' इसी में एक (हारिस बिन नोमान फहरी) ने

यहाँ तक कह दिया कि यदि यह रसूल (स0) की ओर से न हो और खुदा की तरफ़ से हो तो खुदा मुझ पर अज़ाब डाले। ऊपर से एक पत्थर उसके सर पर आया और वह उसी समय मर गया।

(आयत उतरती है:)

'आज काफिर लोग तुम्हारे धर्म (से फिर जाने से) निराश हो गये, तो तुम उनसे तो डरो ही नहीं बल्कि मुझसे डरो, आज मैंने तुम्हारे धर्म को पूरा कर दिया और तुम पर अपनी नेमतें (अच्छाइयाँ, भलाइयाँ) समाप्त (पूरी) कर दीं और तुम्हारे (धर्म) इस्लाम को पसन्द कर लिया' (सूरा 'मायदा' आयत-3)

फिर बधाई, मुबारकबाद का शोर।

सब मुसलमान खुश, मौला मिल गया। इस्लाम प्रसन्न, रक्षक मिल गया। धर्म विश्वास खिल गया, धर्मपाल मिला, अब धर्म अनाथ न होगा। □□□

बक़िया शादी का निज़ाम.....

लिमुवकिकली अलल महरिल मालूमि बिश्शरतिल मालूम।

(मैं मालूम महेर पर मालूम शर्त के साथ अपने मुवकिकल से निकाह क़बूल/स्वीकार करता हूँ।)

औरत का वकील कहे: ज़व्वजतु मुवकिकलती मुवकिक-ल-क अलल महरिल मालूमि बिश्शरतिल मालूम।

(मैं मालूम शर्त के साथ मालूम महेर पर अपनी मुवकिकला को आपके मुवकिकल की ज़ौजा (बीवी) करता हूँ।)

मर्द का वकील कहे: क़बिल्तुतज़वी-ज लिमुवकिकली अलल महरिल मालूमि बिश्शरतिल मालूम।

(मैं मालूम शर्त के साथ मालूम महेर पर अपने मुवकिकल की शादी (दाम्पत्य) क़बूल करता हूँ।)

तौकील (वकील होने) का सीगा

बेहतर यह है कि अक़द के बाद एक शरूस् निकाह करने वाले से तौकील (वकील होने) के सीगे को जारी करने की इजाज़त ले ले और दूसरा शरूस् औरत की तरफ से तौकील के क़बूल करने का वकील हो जाए। फिर

मर्द का वकील कहे: वक़लतु फ़ुलानतन फित्तलाकि अन्नी बिनफिसहा औ बिवकीलिहा बिश्शरतिल मालूम।"

(मैं अपनी ओर से मालूम शर्त के साथ फ़ुलानी (अमुका) को उसके द्वारा या उसके वकली द्वारा तलाक़ (के सम्बन्ध) में वकील करता हूँ।)

औरत का वकील कहे: क़बिल्तुतौकील लिमुवकिकलती बिश्शरतिल मालूम।

(मैं मालूम शर्त से अपने मुवकिकल की ओर से (इस तरह) वकील करने (बनाने) को क़बूल करता हूँ।) □□□

* मौला अरबी शब्द है जिसके माने हैं: मालिक, स्वामी, रखवाला, संरक्षक, साथी, साझी, दोस्त, संबन्धी, आज़ाद किया हुआ दास (गुलाम)

“औरतों से बहुत ज़्यादा भलाइयाँ करो।”

(इमाम जाफर सादिक अ०)

इतिहास और इस्लाम में औरत की हैसियत

(पिछले शुमारे से आगे)

इस्लाम का जवाब

इस्लाम अल्लाह का मज़हब और विधान है। इस्लाम प्रकृति (Nature) का शब्दकोष है। इस्लाम इन्सान और मानवता के तालमेल का नाम है। इस्लाम का सिस्टम और उसके क़ानून उस महान प्रभु अल्लाह की ओर से हैं जिसने इन्सान को पैदा किया है। वह जानता है कि इन्सान क्या है और कौन है, वह बाहर से क्या है और अन्दर से क्या है। इसलिए उसने उसके हालात और हैसियत के आधार पर क़ानून बनाये हैं।

इतिहास की वे दस बातें जो उपर बतायी गयी हैं और जो एक सभ्यता (Civilization) बन चुकी हैं, उनके बारे में इस्लाम का कहना है:—

1— औरत का जन्म और उसका होना बिल्कुल मर्द की तरह है। उसको खुदा ने मतलब से पैदा किया है और वह पूरी तरह 100% मानवता रखने वाली है:

“सच यह है कि हमने इन्सान को सबसे अच्छे केंडे (ढंग, बनावट) में पैदा किया।”

(सूरा ‘तीन’ आयत-4)

हुज्जतुल इस्लाम प्र० हुसैन अन्सारियान
अनुवादक : मु० र० आबिद

“(यह भी) अल्लाह की कारीगरी है जिसने हर चीज़ को पैदा किया, बेशक वह उसे जानता है जो तुम करते हो।”

(सूरा ‘नमल’ आयत-88)

“उसने हर चीज़ बहुत अच्छी बनायी।”

(सूरा ‘सजदा’ आयत-7)

2— औरत को खुदा की ओर से इन्सानी रूह ही दी गयी। उसकी ओर से जो रूह पड़ी है और जिस रूह से उसे ख़ास किया गया वह मर्द की रूह से अलग नहीं बल्कि उसी की तरह है। औरत की असलियत मर्द की असलियत जैसी है।

“ऐ लोगो तुम अपने उस पालने वाले से डरो जिसने तुम्हें एक जान से पैदा किया और उससे उसका वर/जोड़ बनाया (जोड़ा बनाया), उन दोनों (जोड़ों) से बहुत से मर्द और औरतें फैला दीं।”

(सूरा ‘निसा’ आयत-1)

“उसकी निशानियों में यह भी है कि उसने तुम्हारे जोड़े तुम्हारी प्रजाति में से बनाए ताकि तुम उनके साथ रहकर चैन करो।”

(सूरा ‘रूम’ आयत-21)

तफ़सीर ‘अयाशी’ में इमाम मुहम्मद बाकिर (अ०) का यह कहना लिखा है कि खुदा ने हज़रत

‘हव्वा’ को हज़रत आदम (अ0) की बची मिट्टी से पैदा किया।

ऐसी आयतों से साबित होता है कि औरत के जन्म में किसी तरह की कमी नहीं है। उसकी रूह वही है जो खुदा की ओर से फूँकी गई है, वह हर तरह से पूरी पक्की पोढ़ी है और बेहतरीन है। वह अपनी सलाहियत, प्रकृति, रूह और अक़ल से खुदाई हिदायत (सन्मार्ग) के साये में रूहानी ऊँचाइयों पर पहुँच सकती है। वहीं वह इन सच्चाईयों से दूर होकर नीच से नीच बन सकती है।

3— उसे मालिक होने (स्वामित्व) का हक़ मिला हुआ है। अच्छे कामों का जो बदला सवाब मिलता है वह उसी का हक़ है। मालिक होने और इस्तेमाल करने में वह मर्द जैसी है।

‘इन्सान के लिए बस उतना ही है जितना उससे सध सके’ (सूरा ‘नज्म’ आयत-39)

शक नहीं, इन्सान अपनी दौड़-धूप, अपने जतन और काम का मालिक है।

‘तुम मर्दों के लिए यह जायज़ नहीं कि जो महर दे चुके हो उससे कुछ ले लो।’

(सूरा ‘बक़र’ आयत-229)

इमाम जाफ़र सादिक़ (अ0) का कहना है: ‘चोर तीन हैं: ज़कात देने में कन्जूसी करने वाला, बीवी का महेर खाने को हलाल (जायज़) समझने वाला और न देने के मन से उधार लेने वाला।’ (बिहारुल अनवार भाग-1 पे-349)

‘तुममें से जो मर्द मर जाएँ और उनकी बीवियाँ जीती रहें उन्हें वसियत करना चाहिए कि

एक साल तक उनका खर्चा दिया जाए और उन्हें पति के घर से न निकाला जाय।

पति के मरने के बाद और तलाक़ के बाद महेर और वसियत के अलावा मर्दों से उनके खर्चे पूरे करने को भी कहा गया है:

‘जिन औरतों को तलाक़ दे दी गई है उनके लिए एक मुनासिब तोहफा यह है कि जो मर्दों की ओर से दिया जाता है। यह मुत्तकियों (संयमियों) पर एक हक़ है।

4— औरत को माँ-बाप पति और बेटों की मीरास (उत्तराधिकारिता) मिलती है।

‘तुम लोगों पर लिखा गया (वाजिब किया गया) है कि जब तुम में किसी के सर पर मौत आ जाए और अपने बाद कुछ माल छोड़े तो उसे चाहिए कि अपने माँ-बाप और करीबी रिश्तेदारों (परिजनों) से अच्छी वसियत कर दे, यह मुत्तकियों पर एक हक़ है।’ (कुर्आन मजीद)

यह आयत उन ग़लत रीतिरिवाजों के खिलाफ़ जंग का एलाना है जिनमें औरतों बच्चों को हक़ से दूर रखा जाता था। ज़्यादती की यह रस्म अरबों से जुड़ी हुई थी। इस आयत ने इस रस्म को तोड़ा।

‘मर्दों का उस माल में हिस्सा है जो माँ-बाप और करीबी रिश्तेदार छोड़ते हैं। औरतों का भी उस माल में हिस्सा है जो माँ-बाप और परिजन छोड़ते हैं चाहे वह माल कम हो या ज़्यादा। यह हिस्सा भाग्य और फर्ज़ ठहराया हुआ है।’ (कुर्आन मजीद)

(जारी)

इदारा

मुख्य समाचार

जश्ने ईदुलफ़ितर व तक़सीमे इनामात

लखनऊ। मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के उपाध्यक्ष डाक्टर मौलाना सै0 कल्बे सादिक़ साहब और काएदे मिल्लत मौलाना कल्बे जवाद साहब के जेरे एहतेमाम जश्ने ईदुलफ़ितर और तक़सीमे इनामात का प्रोग्राम युनिटी डिग्री कालेज के ग्राउण्ड में मुनअफ़िद हुआ जिसमें खास मेहमान के तौर पर मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव के हाथ से कालेज के उन होनहार तलबा को गोल्डेन टी सेण्टर की तरफ से पच्चीस-पच्चीस हजार रुपये के चेक दिये गए जिन्होंने तालीम के दौरान नुमायों कारकरदगी का मुज़ाहेरा किया।

तक़सीमे इनाम के बाद मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव ने लोगों को सम्बोधित करते हुए कहा कि मुस्लिम समाज को एक साज़िश के तहत तालीम से अलग रखने की कोशिश की गई इसके पीछे इरादा था कि जब तक इस समाज में जिहालत और अज्ञानता रहेगी लोगों में सोचने समझने की सलाहियत नहीं होगी और इनका इस्तेमाल मर्ज़ी के हिसाब से किया जाता रहेगा। मुख्यमंत्री ने कहा कि नफ़रत मदरसों से नहीं फैल रही है बल्कि आर0एस0एस0 के ज़रिए बनाए गए सरस्वती शिशु मन्दिरों में नफ़रत का पाठ पढ़ाया जा रहा है। मुझे शिशु मन्दिरों की सरगर्मी और उनके

मक़सदों के बारे में पक्की जानकारी है। उन्होंने कहा कि शिशु मन्दिरों में पढ़ने वाले बच्चों के कई ज़िम्मेदारों ने उनसे शिकायत की है कि उनमें नफ़रत का पाठ पढ़ाया जाता है और बाद में वह अपने माँ-बाप तक की इज़्ज़त नहीं करते। उन्होंने मदरसों की तारीफ़ करते हुए उन सियासी लीडरों पर निशाना साधा जो मदरसों के बारे में उलटी बातें करते हैं।

समारोह में डाक्टर मौलाना कल्बे सादिक़ साहिब ने कहा कि सभी को जिहालत और ग़रीबी के खिलाफ़ काम करना चाहिए क्योंकि यही वह दो चीज़ें हैं जो पूरी इन्सानियत की सबसे बड़ी दुश्मन हैं। डाक्टर कल्बे सादिक़ साहब ने मुख्यमंत्री से बहुबेगम गर्ल्स डिग्री कालेज के लिए ज़मीन देने की गुज़ारिश की जिस पर उन्होंने हाँ में जवाब दिया। और इस कालेज के निर्माण के लिए दस हजार रुपये की रक़म देकर फण्ड जमा करने की शुरुआत की जिस पर मुख्यमंत्री ने पच्चीस लाख रुपये देने का एलान किया।

इस समारोह में दूसरी अहम शख़्सियतों ने भी अपने ख़यालात हाज़रीन के सामने पेश किये। इस मौक़े पर मौलाना कल्बे जवाद साहिब ने मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव को बेगम हज़रत महल एवार्ड दिया।

जार्ज बुश की हार ईरान की जीत—आयतुल्लाह ख़ामेना-ई

तेहरान। ईरान के सुप्रिम लीडर आयतुल्लाहिल उज़मा सै0 अली ख़ामेना-ई ने कहा कि अमरीकी कांग्रेस के चुनाव में राष्ट्रपति जार्ज बुश की हार ईरान के लिए खुली हुई जीत की तरह है। आयतुल्लाह ख़ामेना-ई ने कहा कि अमरीका में चुनाव का मामला सिर्फ़ अमरीका का मामला नहीं है बल्कि यह दुनिया भर में मिस्टर बुश की नापाक जंगी पॉलीसियों की हार है। और बुश की पॉलीसी हमेशा ईरान के खिलाफ़ रही है इसलिए उनकी हार असल में ईरान की जीत है। याद रहे कि इराक़ की जंग के मामले पर वहाँ की अवाम की बेचैनी की वजह से ही राष्ट्रपति बुश की रिपब्लिकन पार्टी का मध्यावती चुनाव में डेमोक्रेट्स से हार हुई है। आयतुल्लाह ख़ामेना-ई ने बुध के दिन बैठे हनून में इस्राईली हमले की और इस हमले पर पच्छिमी देशों की ख़ामोशी की भी भरपूर निंदा की।

सै0 मुजतबा हैदर जाएसी का इन्तेक़ाल

लखनऊ। इम्तियाजुशोअरा मौलाना सै0 मुहम्मद जाफ़र कुद्सी जाएसी के लायक़ फ़र्ज़न्द सै0 मुजतबा हैदर प्रोवीज़न फण्ड कमिश्नर (पैदाइश 20 सितम्बर 1936 ई0) का लम्बी बीमारी के बाद 30 अक्टूबर 2006ई0 को इन्तेक़ाल हो गया। और उसी दिन मरहूम को दारुस्सलामे हिन्द हुसैननियाए गुफ़रान मआब में सुपुर्दे ख़ाक़ किया गया। मरहूम अपने होनहार बेटे डाक्टर इरफ़ान मुजतबा (वफ़ात 30 मार्च 1999ई0) के मरने से बेहद टूट गए थे। इदारा मरहूम के बेटे, बीवी और दूसरे रिश्तेदारों को ताज़ियत पेश करता है और मोमिनीन से फातेहा ख़्वानी की दरख़्वास्त करता है।

समाज के सुधार के लिए निकाह नामा नहीं

बल्कि शरीअत के सिलसिले में बेदारी पैदा करना जरूरी है: मौलाना कल्बे जवाद

लखनऊ। आसफी मस्जिद में जुमा के ख़ुतबे में मौलाना कल्बे जवाद साहब ने दुआ के मौजू पर बोलते हुए कहा कि दुआ की ज़रिए रूहानी मर्ज़ दूर होते हैं, दुआ के ज़रिए इंसान, इंसान बनता है। मौलाना ने कहा डाक्टर, इन्जीनियर, वकील, प्रोफेसर, मोलवी, मौलाना वगैरा बनना आसान है लेकिन इंसान बनना बहुत मुश्किल है। इंसान सूरत का नाम नहीं है बल्कि सीरत का नाम है। दुआ की ज़रिए से इंसान का घमण्ड और हसद दूर होता है, हकीकत में यह दुआ नहीं बल्कि रूहों के मर्ज़ों की दवा है।

मौलाना ने औरतों के हुक्क के सिलसिले में बात करते हुए कहा कि ऐसा लगता है कि जैसे पूरी दुनिया में और किसी कौम में कोई मसला ही नहीं है न यहूदियों में कोई मसला है न ईसाईयों में। सारे मसले सिर्फ मुसलमानों में हैं यह पूरी इण्टर नेशनल पॉलीसी है मुस्लिम और इस्लाम को बदनाम करने की जबकि दूसरे मज़हबों में बड़े-बड़े मसले हैं जिनको दबा दिया जाता है और मुसलमानों में अगर दूर दराज़ किसी गाँव में भी कोई छोटा सा मसला सामने आ जाए तो उस पर बहस शुरू हो जाती है जैसे सारी बुराईयों सिर्फ मुसलमानों और इस्लाम में ही हैं। पर्दे का मसला ज़्यादा उठ गया और बहस भी वह कर रहे हैं जो खुद बेपर्दा हैं जिनको पर्दे से कोई वास्ता नहीं उनको पर्दे पर बातचीत के लिए बुलाया जाता है फिल्म एक्टर्स बुलाई जाती हैं। उन्होंने कहा कि मुँह खोलने के बारे में आयतुल्लाह ख़ुमैनी रह0 की भी इजाज़त है। उन्होंने हज़ को दलील बनाया लेकिन आयतुल्लाह ख़ुई ने इजाज़त नहीं दी है।

औरतों के तलाक़ के हक़ के मसले पर कहा जा रहा है कि आयतुल्लाह सीसतानी साहब की तार्ईद हासिल है तो मैं समझता हूँ कि यह उन पर इल्ज़ाम है कि जो हक़ कुर्आन और अइम्मए मासूमीन (अ0) ने नहीं दिया वह हक़ एक मुजतहिद कैसे दे सकता है। औरत को तलाक़ का हक़ झूठ है मरजे (मुजतहिद) पर इल्ज़ाम है। शरीअत में है कि शौहर अपनी वकालत औरत को देता है कि तुम मेरी तरफ से तलाक़ के लिए वकील हो मगर सीधे तौर पर औरत को तलाक़ का हक़ नहीं मिलता। बल्कि मर्द औरत को अपना वकील बनाता है अब मुअक्किल को इख़्तियार है कि जब तक चाहे अपना वकील रखे और जब चाहे अपनी वकालत वापस ले ले। कहा जाता है कि औरत मर्द में फर्क है लेकिन कुदरत ने तराजू के दोनों पल्लों को बराबर रखा और निकाह का हक़ औरत को दिया तलाक़ का हक़ मर्द को दिया। निकाह में

औरत की तरफ से "अनकहतु" और मर्द की तरफ से "कबिल्तु" होता है। इसका मतलब यह हुआ कि निकाह औरत की तरफ से होता है और कुबूल मर्द की तरफ से होता है। इसलिए अगर औरत की तरफ से "अनकहतु" न हो तो मर्द क़यामत तक "कबिल्तु कबिल्तु" कहता रहे तो क्या निकाह हो जाएगा? इसका मतलब यह हुआ कि मर्द चार औरतों से निकाह नहीं करते बल्कि चार औरतों एक मर्द से निकाह करती हैं। हकीकत यह है कि निकाहनामे से समाज का सुधार नहीं हो सकता जब तक शरीअत के सिलसिले में बेदारी न पैदा हो जाए जब तक ज़हन को जगाया न जाए। मुश्किल यह है कि जब हम मिम्बर से सुधार की बात करते हैं तो कहा जाता है कि यह तो अहलेबैत के दुश्मन हो गए हैं यह फ़ज़ाएले अहलेबैत के इन्कार करने वाले हैं।

किसी बुजुर्ग ने बताया कि यह निकाह नामा नया नहीं है बल्कि हमारे बुजुर्ग आलिमे दीन आयतुल्लाह अल्लामा सै0 अली नकी ताबा सराह ने 40-50 साल पहले इसे पेश किया था लेकिन इसको मन्हूस कह कर रद्द कर दिया गया था इस निकाहनामे में था कि शौहर अपनी वकालत निकाह के साथ वकालते तलाक़ का हक़ भी औरत को दे दे तो उस वक़्त कहा गया था कि तलाक़ का मसला निकाह के साथ यह तो मन्हूस है उस वक़्त इसकी ज़बरदस्त मुख़ालेफ़त की गई और जिन लोगों ने मुख़ालेफ़त की थी अब वही लोग इसे जारी कर रहे हैं। तलाक़ किसी मसले का हल नहीं है क्योंकि तलाक़ खुद एक मसला है इसका हल यह है कि मर्द पर समाजी दबाव बनाया जाए कि वह औरत के हुक्क को पूरा करे और जो मर्द ऐसा नहीं करते उनका बाइकाट किया जाए।

सै0 कल्बे बाकिर नक़वी का कराची में इन्तेक़ाल

लखनऊ। आल इण्डिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के उपाध्यक्ष मौलाना डाक्टर सै0 कल्बे सादिक़ साहब के भाई और काएदे मिल्लत मौलाना सै0 कल्बे जवाद साहब के चचा सै0 कल्बे बाकिर नक़वी उर्फ़ नासिर साहब का लम्बी बीमारी के बाद 4 नवम्बर 2006 ई0 की रात को कराची में इन्तेक़ाल हो गया। मरहूम कराची में पुलिस विभाग में 30 साल की मुलाज़मत के बाद डिप्टी एस0पी0 के ओहदे से रिटायर हुए थे।